ISSN : 2349-1876 (Print) / ISSN : 2454-1826 (Online)

Double Blind Peer-reviewed Referreed Research Journal

INTERNATIONAL JOURNAL OF INNOVATIVE SOCIAL SCIENCE & HUMANITIES RESEARCH

Volume-V, Issue-II, April-June, 2018 (SPECIAL ISSUE)

Journal has been approved and notified by UGC Serial No. 48941 / PIF 5.46

SPECIAL ISSUE

मीडिया, साहित्य और राष्ट्रवाद

MEDIA, LITERATURE AND NATIONALISM

EDITOR

Dr. Harish Arora
PGDAV College (Eve.)
(University of Delhi)
Nehru Nagar, New Delhi-110065

A Quarterly Multidisciplinary Double-Blind Peer-reviewed International Referreed Research Journal

IJISSHR

(INTERNATNIONAL JOURNAL OF INNOVATIVE SOCIAL SCIENCE & HUMANITIES RESEARCH)

ISSN : 2349-1876 (Print) / ISSN : 2454-1826 (Online)

Volume - V, Issue - II, April - June (2018)

SPECIAL THANKS

Dr. Vinit Kumar, Director, CSIRS

EDITOR

Dr. Harish Arora
P.G.D.A.V. College (Evening)
(University of Delhi)
Nehru Nagar, New Delhi-110065

Associate Editors

Dr. Jaspal Singh, English
Dr. Jyotsna Prabhakar, English

1. Editing of the Research Journal is processed without any remittance. The selection and publication is done after recommendation of subject expert referee.
2. Thoughts, language, vision and example in published research paper are entirely of author of research paper. It is not necessary that both editor and editorial board are satisfied by the research paper. The responsibility of the matter of research paper is entirely of author.
3. In any condition if any National / International University denies to accept the research paper published in the Journal then it is not the responsibilities of Editor, publisher and Management.
4. Before re-use of published research paper in any manner, it is compulsory to take written acceptance from Chief Editor, unless it will assumed as disobedience of copyright rules.
5. All the legal undertaking related to this journal is subjected to be hearable at Lucknow jurisdiction only.

THIS ISSUE IS PUBLISHED FOR P.G.D.A.V. COLLEGE (EVE), UNIVERSITY OF DELHI

सम्पादकीय

भारतीय राष्ट्रवाद और संस्कृति बोध

मानव जन्म से ही संवेदनशील प्राणी रहा है जिसके कारण मानव-मन ने समूह निर्माण की प्रवृत्ति को स्वीकार किया। सामूहिक रूप में रहने के कारण ही मानव का मानव के प्रति अनुरागात्मक सम्बन्ध स्थापित हुआ, बाद में जिससे सह-अस्तित्त्व की भावना का जन्म हुआ। ऐसा नहीं कि मानव की रागात्मक वृत्ति केवल मानव के लिए ही क्रियाशील थी प्रत्युत अपने जन्म स्थल और जिस स्थल पर वह महीनों रहता है उसके प्रति भी उसे एक विशेष लगाव हो जाता है। इसी कारण एक स्थान पर कई छोटे-छोटे समूहों का निर्माण हुआ। यही समूह आपस में मिलकर समाज का रूप बने। सामूहिकता की भावना का सहज विकास ही कालान्तर में राष्ट्र के रूप में प्रतिफलित हुआ। मूलत: भौगोलिक कारणों से एवं अपने अस्तित्त्व को बनाए रखने तथा विकास की साधना से प्रेरित होकर मानव ने अकेले रहने की बजाए समाज के घटक रूप में रहना पसन्द किया। यही समाज आगे चलकर एक दूसरे के निकट आकर पहले राज्य बने और फिर उनसे राष्ट्र।

लेकिन इस आधार पर यह नहीं कहा जा सकता कि राष्ट्र केवल 'लोगों का समूह' है। डॉ. वासुदेवशरण अग्रवाल ने 'राष्ट्र' का स्वरूप स्पष्ट करते हुए लिखा है "भूमि, भूमि पर बसने वाला 'जन' और जन की संस्कृति तीनों के सम्मिलन से राष्ट्र का स्वरूप बनता है।" (**'राष्ट्र का स्वरूप', पृथ्वीपुत्र, पृष्ठ 91**) राष्ट्र के संदर्भ में श्री अरविन्द का मत है कि राष्ट्र "एक भूमि का टुकड़ा, शब्द अथवा मस्तिष्क की कल्पना मात्र नहीं है। वह एक महान शक्ति है जो कि करोड़ों शक्तियों के योग से बनती है जो राष्ट्र को बनाते हैं, जिस प्रकार भवानी महिषमर्दिनी एक विशाल शक्ति के संग्रह और एकता के रूप में लाखों देवताओं की शक्ति से उत्पन्न हुई थी। भारत में जिस शक्ति को हम भवानी भारती कहते हैं, वह तीस करोड़ जनता की शक्तियों की जीवित एकता है।" **(डॉ. रामनाथ शर्मा कृत राष्ट्रधर्म द्रष्टा श्री अरविन्द से साभार, पृष्ठ 107)** लेकिन बाबू गुलाबराय राष्ट्र को एक राजनीतिक इकाई के रूप में देखते हैं। इसीलिए वे राष्ट्र के लिए यह आवश्यक नहीं मानते कि उसमें रहने वाले एक जातीय समुदाय के ही हों। दरअसल भू-भाग तो राष्ट्र का बाह्य पक्ष है। उस भू-भाग पर रहने वाले भूमि-वासियों के समूह, उनमें सहअस्तित्व की भावना तथा गौरव की अनुभूति से उनका अन्त:पक्ष व्यंजित होता है।

कई विद्वानों ने भिन्न-भिन्न भाषाओं, विचारों, लोक-व्यवहारों की विविधता को पृथक राष्ट्र मान लिया है। जबकि यह केवल जातिवाद और भाषावाद के नाम पर उग्र स्वभाव रखने वाले लोगों की सीमित मानसिकता का परिचायक है। राष्ट्र विभिन्न भूखण्डों पर बसे विभिन्न राज्यों के संधि पत्र पर हुए हस्ताक्षरों से नहीं बनता यह इतिहास की यात्रा में विकसित होती हुई जीवनधारा है। अत: कहा जा सकता है कि किसी विशिष्ट भू-भाग के वे लोग जो किसी-न-किसी अथवा किन्हीं-न-किन्हीं जीवन-बिन्दुओं पर एकमत हों 'राष्ट्र' कहलाते हैं।

राष्ट्र के सम्बन्ध में विचार करने के उपरान्त यह सवाल उठता है कि विश्व के अन्य देशों में राष्ट्र शब्द के स्थान पर 'राज्य' की अवधारणा दिखाई देती है। विशेष रूप से पश्चिमी देशों में विभिन्न राज्यों के संयुक्त संगठन को एक विशेष रूप प्रदान किया जाता है जो राष्ट्र की अवधारणा से भिन्न राज्य के रूप में ही ख्यात हैं इसीलिए 'संयुक्त राज्य अमेरिका' विभिन्न राज्यों का समूह है न कि राष्ट्रों का। वास्तव में राज्य समाज की एक विशुद्ध राजनीतिक इकाई है। राज्य (State) और राष्ट्र (Nation) दोनों ही राजनीतिक रूप से एक होने पर भी दोनों में संगठन के आधार की दृष्टि से अंतर है। राज्य में एकता का सूत्र विशुद्ध राजनैतिक होता है अर्थात् शासन की केन्द्रीयता ही राज्य निर्माण के लिए पर्याप्त है किन्तु राष्ट्र में इसके अतिरिक्त जन-समूह की सामान्य-चेतना, लोक-परम्परा, रीति-रिवाज एवं रुचियों की समानता भी आवश्यक है। चूँकि राज्य समाज के छोटे-छोटे समूहों से मिलकर बनता है जिनकी आपसी सोच उनकी सहअस्तित्व की भावना के अनुरूप समान होती है लेकिन राष्ट्र विशाल भूखण्डों की राज्यीय सत्ता का केन्द्र है। जहाँ समूचे राज्यों की विभिन्न भाषाओं, परम्पराओं, लोक-व्यवहारों आदि के बावजूद उनमें समानता स्थापित करना उसका मुख्य आधार होता है। प्राचीन राज्यों की एकता भौतिकवादी दृष्टि पर टिकी रही इसीलिए उनमें राष्ट्रत्व के तत्व समाहित नहीं हो पाए लेकिन विकसित मानसिकताओं के कारण आधुनिक राज्यों में मनोवैज्ञानिक आधार पर सहअस्तित्व की भावना को स्वीकार किया। इसी सूक्ष्म आधार पर संयुक्त होकर कोई राज्य 'राष्ट्र' का स्वरूप धारण कर लेता है।

भारत में 'राज्य' और 'राष्ट्र' शब्द अन्य देशों की अपेक्षा अधिक विस्तृत और गहरे अर्थों में परिपोषित होते हैं। अन्य देश विभिन्न भाषाओं और विचारों के टकराव के कारण कभी 'राष्ट्र' नहीं बन सके। युगोस्लाविया, सोवियत संघ, चेकोस्लोवाकिया जबरन जोड़ कर राष्ट्र बनाने की कोशिश किए गए। बांग्लादेश को भी बलात् पाकिस्तान के साथ जोड़ दिया गया जबकि वह भाषा और संस्कृति के रूप में भिन्न था। मुरली मनोहर जोशी के अनुसार 'हमारे भारत में कई विचारधाराओं में अंतर है। ये विचारधाराएँ एक राज्य और कई राष्ट्र भारत में मानती हैं जबकि हम मानते हैं कि भारत एक राष्ट्र है और जिसमें कई राज्य है।..... इसमें कई जातियाँ, कई आक्रमणकारी और कई अक्खड़-फक्कड़ आये, इसने सबको आत्मसात कर लिया। वे इसी जीवनधारा में समाहित हो गए। उन्होंने भारतीय राष्ट्रीयता को परिपुष्ट किया। उन्हें पृथक करके नहीं देखा जा सकता।' (**'सम्प्रदाय के आधार पर राष्ट्र नहीं बन सकता', धर्मयुग - 16-30 अप्रैल, 1993, पृष्ठ 21**) राष्ट्रवाद के इसी सिद्धांत को स्वीकार करते हुए रफीक जकरिया भी राष्ट्र और राज्य में अंतर स्वीकार करते हैं। उनके अनुसार 'राष्ट्रवाद के सिद्धांत के आधार पर ब्रिटेन और अमरीका का अलग अस्तित्व है जबकि उनकी भाषा एक है, धर्म और संस्कृति भी एक है। इसी प्रकार फ्रैंच और इंग्लिश बोलने वाले कनाडा में एकत्रित हो गये, लेकिन धर्म एक होने के बावजूद भी अलग-अलग भाषाओं के होने के कारण वे आज तक एक राष्ट्र न बनकर एक राज्य ही बन पाए।' (**'आज का राष्ट्रवाद', धर्मयुग - 16-30 अप्रैल, 1993, पृष्ठ 14**) राज्य क्योंकि पूर्णत: एक राजनैतिक व्यवस्था है इसीलिए मानवीय आवश्यकताओं का मूर्त रूप होने के कारण यह भौतिक है। जबकि राष्ट्र का सम्बन्ध मनुष्य की अमूर्त भावनाओं से होता है, वह मनुष्य की आध्यात्मिक चेतना को भी भावनात्मक आधार पर आवश्यक मानता है। इसलिए 'राष्ट्र' की प्रवृत्ति' आध्यात्मिक है। राष्ट्र धर्म की भांति आत्मगत है जबकि राज्य वस्तुगत। राष्ट्र मन की स्थिति के अनुरूप निश्चित होने के कारण मनोवैज्ञानिक है जबकि राज्य बौद्धिकता के धरातल पर सभ्यतापूर्ण जीवन दर्शन की एक अविच्छेद्य दशा।

सामान्य रूप से दैनिक प्रयोग की भाषा में **'राष्ट्र'** और **'देश'** का प्रयोग पर्याय के रूप में ही प्रयुक्त होता है। वास्तव में राष्ट्र (Nation) और देश (Country) दोनों के अर्थों में अन्तर स्पष्ट करने वाले कई व्यावर्तक कारण हैं। 'देश' केवल धरती पर मिट्टी का एक भूखण्ड है जो केवल भौगोलिक सीमाएं दिखाता है। उसे केवल मानचित्र पर ही देखा जा सकता है। जब तक उस पर मानव जाति का निवास न हो तब तक वह केवल ठोस वस्तु है, जिसका प्रत्यक्ष अनुभव किया जा सकता है। उस पर बसने वाली जनजाति का अस्तित्व भी तभी होता है जब उसकी अपनी संस्कृति होती है, अपनी सभ्यता और परम्परा होती है। देश भौगोलिक सीमाओं का प्रतीक है तो राष्ट्र इन सीमाओं में रहने वाले लोगों की एकसूत्रता और संस्कृति का। अत: भौगोलिक सीमाओं में आबद्ध कोई भी भूभाग तब तक राष्ट्र का अधिकारी नहीं होता जब तक वहाँ के लोगों में सहअस्तित्व की भावना न हो। देश तो एक धर्मशाला की भांति है जहाँ लोग आते हैं, ठहरते हैं और चले जाते हैं जबकि राष्ट्र जन और जन-संस्कृति के प्रति निष्ठा रखने वालों का समूह है।

महाभारत की एक प्रसिद्ध कथा है, जब पाण्डव वनवास में थे तब कौरव वहाँ मृगया के लिए गए। यह मृगया तो बस एक बहाना था, इसके माध्यम से वे पाण्डवों को किसी-न-किसी भांति अपमानित करना चाहते थे। संयोग से वन में उनका गंधर्वों से झगड़ा हुआ और गंधर्वों ने अपनी शक्ति के बल पर कौरवों को बंदी बना लिया। जब इस बात का पता पाण्डवों को चला तब कौरवों की इस पराजय से युधिष्ठिर के अतिरिक्त सभी प्रसन्न हुए। लेकिन धर्मराज युधिष्ठिर ने अपने अनुजों से कहा-

'परै: परिभवेप्राप्ते वयं पंचाधिकं इतिम्।
परस्परविरोधेतु वयं पंचैव ते शतम्॥'

अर्थात् 'आपसी झगड़े में हम भले ही सौ (कौरवों) के विरुद्ध पाँच (पाण्डव) हों पर जब हम पर बाहरी (गंधर्वों का) आक्रमण होता है तब हमें मिलकर सौ अधिक पाँच यानि एक सौ पाँच को उनका सामना करना चाहिए' और उन्होंने भीम और अर्जुन को कौरवों की मुक्ति के लिए प्रेरित किया।

'राष्ट्रीयता' का सार इसी किस्से में है। कौरवों द्वारा पाण्डवों के विरुद्ध रचे गए षडयंत्र के बावजूद युधिष्ठिर ने राष्ट्रीय धर्म और भावात्मक सम्बन्धों के आधार पर उनकी रक्षा का निश्चय किया। भावात्मक होने के कारण ही 'राष्ट्रीयता' मानसिक तत्वों पर आधारित अमूर्त वस्तु है जिसे परिभाषित कर पाना सहज नहीं। क्लार्कसन ने इसी कठिनाई की ओर संकेत करते हुए कहा कि 'चिर परिचित होता हुआ भी राष्ट्रवाद, पाप की धारणा के समान, परिभाषा से परे है।' **(Nationalism & Internationalism, Page-45)** फिर भी अनेक विद्वानों ने 'राष्ट्रीयता' के सम्बन्ध में अपने-अपने मतों से उसके स्वरूप का निर्धारण किया है।

बालकृष्ण शर्मा नवीन इसे मानव हृदय से सम्बद्ध स्वीकारते हुए कहते हैं कि जिस प्रकार मानव-मन में असंख्य संवेगों, मनोविकारों और मनोभावों के अनुरूप ही मानव-हृदयों में प्रेम, घृणा, ईर्ष्या-द्वेष आदि मनोभाव विकसित और उन्नत होते हैं, उसी प्रकार राष्ट्रीय भावना भी मानवों के हृदयों में विकसित, आलोड़ित और उन्नत होती है। इसी तरह प्रसिद्ध इतिहास विशेषज्ञ डॉ. रघुवीर का मत है कि 'यह (राष्ट्रीयता) वह निराकार भावात्मक शक्ति है जिसके द्वारा राज्य की आंतरिक निरंकुश प्रभुता के विरुद्ध अधिकारों की रक्षा की जाती है जो बाह्य आक्रमण से रक्षा करने हेतु सुसंगठित समाज की स्थापना में सहायता करती

है इसलिए समूचे राष्ट्र और जन-साधारण के हित एवं उनके प्रति विशेष प्रेम, कर्तव्य तथा सहयोग की भावना ही राष्ट्रीयता की मूल आधार हो सकती है।' **(माखनलाल चतुर्वेदी के काव्य में राष्ट्रीयता, पृष्ठ 3)**

वास्तव में भौगोलिक आकार को ही राष्ट्रीयता का आधार मानना एकांगी होगा। पारस्परिक सहयोग, सर्वतोन्मुखी उन्नति करने और संगठित रहने की उत्कट अभिलाषा, उस भू-भाग से प्रेम और उसके सभी जीवन बिन्दुओं पर गर्व की भावना से ही राष्ट्रीयता की भावना उभरती है। वर्तमान संदर्भों में तो राष्ट्रीयता धर्म बन गई है जिसके लिए लोग अपना सर्वस्व त्यागने और बलिदान होने में भी नहीं हिचकते। इसके निर्माण में जहाँ राष्ट्र के प्रति विवेकपूर्ण लगाव की निश्चित भूमिका होती है वहीं अतीत और वर्तमान के सुखद रूप की परिकल्पना भी इसका मुख्य आधार है। मुरली मनोहर जोशी इसे पश्चिम की राजनैतिक अवधारणा से अलग सांस्कृतिक अवधारणा स्वीकार करते हैं। उनके अनुसार 'राष्ट्रीयता राज्य में नहीं संस्कृति में निहित है।.. राष्ट्रीयता जब संस्कृति पर आधारित होती है तब वह उच्च धरातल पर होती है और वह व्यक्तियों में एक सांस्कृतिक चेतना, जिसके जीवन मूल्य राजनैतिक चेतना से अधिक उदात्त होते हैं, उस पर आधारित होती है। यह सांस्कृतिक चेतना राष्ट्र को चिरंजीवी बनाती है।' **('सम्प्रदाय के आधार पर राष्ट्र नहीं बन सकता', धर्मयुग - 16-30 अप्रैल, 1993, पृष्ठ 21)** इसीलिए भारत एक राष्ट्र के रूप में सबसे प्राचीन संस्कृति को संजोय रखने वाला राष्ट्र है। राष्ट्रीयता के लिए यह आवश्यक है कि उसमें वस्तु, विचार और भाव - तीनों की सत्ता समानान्तर रूप से सम्पृक्त हो। इसलिए राष्ट्रीयता एक आंतरिक प्रवृत्ति है। यह एक ऐसी चेतना है जिसमें विश्व को लेकर चलने की शक्ति है। इसके प्रस्थान बिन्दु में वैयक्तिकता और विस्तार में विश्व विद्यमान है। बिना व्यक्तिगत अनुराग और अनुभूति के समूचे राष्ट्र के प्रति समर्पण की भावना जागृत करना असम्भव है। मानव का 'व्यष्टि' से 'समष्टि' की ओर उन्मुख होना ही राष्ट्रीयता की भावना को उद्‌भूत करता है। जब व्यक्ति राष्ट्र के हितार्थ समन्वय की भावना का स्वीकार तथा स्वार्थों और संकुचित सीमाओं का परित्याग करता है तभी सच्ची राष्ट्रीयता का जन्म होता है।

जिस तरह से राष्ट्र और देश में भिन्नता है उसी तरह से **राष्ट्रीयता** (Nationality) और **राष्ट्रिकता** (Nationism) में भी भेद है। जहाँ राष्ट्रीयता मानव-जीवन की एक विशिष्ट उपलब्धि है और मानव मन की संवेदनाओं से युक्त संस्कृति से पोषित एवं विकसित होती है वहीं राष्ट्रिकता राष्ट्र की भौगोलिक सीमाओं और उसके परिवेश का ज्ञान कराती है। 'राष्ट्रिकता' राष्ट्र के बाह्य स्वरूप का बोधक तत्व है और 'राष्ट्रीयता' उसके अन्तस की चेतना शक्ति।

राष्ट्रीयता का सर्वप्रमुख आधार देशभक्ति ही है। समाज की एकता और उसकी संस्कृति तथा देश के प्रति श्रद्धा और भावना का भाव किसी भी राष्ट्र के पार्श्व हैं लेकिन देशभक्ति उसका सर्वोपरि आधार है जिसके बिना राष्ट्रीयता की कल्पना सम्भव ही नहीं है। राष्ट्र के प्रति अनुराग और समर्पण भाव ही देशभक्ति है। राष्ट्र के कण-कण और उसके गौरवशाली प्रतीकों के प्रति अनुरागात्मक प्रवृत्ति ही देशभक्ति की भावना है। देश के प्रति इस प्रमाद प्रेम में भावना का स्थान सर्वोपरि होता है जबकि राष्ट्रवाद में भाव तत्व के होने पर भी बुद्धि तत्व की प्रधानता रहती है। दरअसल राष्ट्रीयता की प्रमुख चेतना देश के प्रति श्रद्धा एवं भक्ति की होती है। यही चेतना भावनात्मक रूप से देशवासियों में देशभक्ति के रूप में उद्‌बुद्ध होकर अपने सर्वस्व त्याग और बलिदान की प्रेरणा जगाती है। अपने व्यक्तिगत अधिकारों और कर्तव्यों का वास्तविक बोध मनुष्य राष्ट्रीयता के अंतर्गत ही कर पाता है।

आज राष्ट्रीयता जब विश्वनजनीन होने को अग्रसर है ऐसे में जब-जब कोई व्यक्ति अपने राष्ट्र से इतर किसी अन्य देश में रहने लगता है तब भी अपने राष्ट्र के प्रति रागात्मक सम्बन्धों के कारण देशभक्ति की भावना सदैव उसके भीतर विद्यमान रहती है और अपने राष्ट्र के विकास के लिए वह कई आयोजनों में सहयोग भी करता है। जहाँ देश के गौरवगान, उसकी वंदना और उसके ऐतिहासिक स्वरूप पर अभिमान आदि देशभक्ति की भावना को उद्दीप्त करते हैं वहीं देश का सांस्कृतिक, सामाजिक, राजनैतिक और आर्थिक उत्थान राष्ट्रीयता का परिपोष करता है।

राष्ट्रवाद और मीडिया

विगत् कुछ वर्षों में वैश्वीकरण की आंधी ने राष्ट्र और राष्ट्रीयता जैसे शब्दों को नए दृष्टिकोण से देखने के लिए बाध्य किया है। व्यक्ति की सांस्कृतिक प्रतिबद्धताओं ने अपने लिए नए दरवाजे खोल लिए हैं और विश्व की संस्कृतियों से परिचय पाकर उसने अपने सांस्कृतिक चरित्र को बदलने का प्रयास भी किया है। यह बदलाव यदि किसी राष्ट्र की संस्कृति और उसके औदात्य के लिए सकारात्मक हो तो कोई कठिनाई नहीं है लेकिन यदि किसी राष्ट्र की सांस्कृतिक चेतना पर आघात होता है तो निश्चित रूप से उसकी अस्मिता पर पड़ने वाला प्रत्येक प्रहार उस राष्ट्र के नागरिकों के भीतर राष्ट्रीयता की चेतना को प्रखर बनाता है।

वैश्वीकरण ने मीडिया के माध्यम से ही विश्व को 'विश्व-ग्राम' के रूप में परिवर्तित कर दिया है। विश्व के अनेक देशों की संस्कृतियाँ अन्य देशों के साथ अपने सांस्कृतिक सम्बन्धों के कारण निकट आ चुकी है। बाज़ार ने व्यक्ति को अपने देश की सीमाओं का त्याग करने के लिए बाध्य कर दिया। वह एक नए भौगोलिक परिवेश में अपने सांस्कृतिक अस्तित्व को बचाए रखने के प्रतिबद्ध दिखाई देने लगा। पश्चिमी देशों में जहाँ विकास की आंधी ने राष्ट्रवाद को हाशिए पर धकेल दिया और तकनीकी के कारण प्रगति की तीव्र गति ने नई चेतना के साथ समन्वय बिठाने का अवसर ही प्रदान नहीं किया। कई राष्ट्रों

की सामासिक संस्कृति का विकास पूर्णत: अवरुद्ध हो गया और समय की गति के साथ अपना सामंजस्य न बिठा पाने के कारण वे भी वैश्वीकरण का शिकार हो गए। लेकिन भारत की सामासिक संस्कृति सामाजिक जीवन के साथ-साथ वैश्विक परिस्थितियों के साथ भी सामंजस्य बिठा पाने में पूरी तरह समर्थ रही है। संस्कृति की पुरातनता का व्यामोह त्यागना सहज नहीं होता लेकिन भारतीयों ने अपनी पुरातन संस्कृति के सूत्रों को आधुनिक जीवन के अनुरूप ढालते हुए अपनी चेतना का विस्तार किया। भारतीयों का राष्ट्रवाद इसी सनातन संस्कृति के प्रगतिशील स्वरूप का राष्ट्रवाद है जो समय की धड़कनों के साथ अपने धड़कनों को मिला देता है। वह काल की परिस्थितियों के अनुरूप अपनी राष्ट्रीयता की अवधारणा स्वयं सुनिश्चित करता है। वह वैश्वीकरण की तेज आंधी में स्वयं को नहीं बहाता वरन् अपनी सांस्कृतिक पराकाष्ठा को बचाए रखते हुए प्रगति की ओर अग्रसर होता है।

जॉन प्लेमेनॉत्ज़ ने राष्ट्रवाद को 'पूर्वी' और 'पश्चिमी' दो अलग-अलग रूपों में देखा। उनका मानना है कि पश्चिमी राष्ट्रवाद को आधुनिकता और ज्ञान के प्रसार तथा मध्य वर्ग के उदय आदि के आलोक में देखना चाहिए। जबकि पश्चिमी देशों (विशेषकर यूरोप) के अतिरिक्त विश्व के अन्य देशों में राष्ट्रवाद वहाँ की सभ्यता और संस्कृति में निरन्तर आए परिवर्तन के संदर्भ में देखा जाना चाहिए। इसी तरह से होरेस बी डेविस भी दो तरह के राष्ट्रवाद की चर्चा करते हैं। उनकी दृष्टि में पहला राष्ट्रवाद ज्ञानदीप्ति का राष्ट्रवाद, जहाँ तर्क को महत्त्वपूर्ण माना गया है तथा दूसरा राष्ट्रवाद संस्कृति और परम्परा के आधार पर विकसित राष्ट्रवाद, जहाँ भावना को तर्क के मुकाबले अधिक प्रमुखता दी गई है। **(साभार, 'उन्नीसवी सदी का साहित्य : विचारधारा और राष्ट्रवाद', रूपा गुप्ता का शोध प्रबंध, पृष्ठ 17-18)** इस दृष्टिकोण से भारतीय राष्ट्रवाद संस्कृति और परम्परा केन्द्रित है। भारतीय समाज अपनी परम्परा और संस्कृति के विभिन्न आदर्श प्रतिमानों की औदात्यता के साथ ही अपनी जीवन-यात्रा में अग्रसर रहते हैं। विगत् वर्षों में भारत के राष्ट्रवाद का स्वरूप प्रगतिशील ही रहा है लेकिन उस प्रगति में भी भारत राष्ट्र की सांस्कृतिक चेतना कहीं भी अवरुद्ध नहीं हुई। बल्कि उस चेतना का राष्ट्रीय स्वरूप अब वैश्विक बनने की ओर अग्रसर है। जहाँ पश्चिमी राष्ट्रवाद का तकनीकी ज्ञान और विकास की तीव्रता के कारण क्षय हुआ वहीं भारतीय राष्ट्रवाद इस तकनीकी के माध्यम वैश्विक जगत में अपनी प्रतिष्ठा और विराटता का बोध कराने लगा। टेलीविज़न में पौराणिक और ऐतिहासिक चरित्रों पर बने धारावाहिक तथा इतिहास की परतों से धूल हटाकर विराट चरित्रों पर बनी ऐतिहासिक फिल्में इस बात का प्रत्यक्ष प्रमाण हैं।

इस तरह से देखा जाए तो तकनीकी ने विश्व की सीमाओं का अतिक्रमण करते हुए सभी देशों की भौगोलिक दूरियों को मिटा दिया। ऐसे में एक देश की चेतना और संस्कृति का परिचय दूसरे देश की चेतना और संस्कृति से हुआ। ऐसे में छोटे देशों की लघु संस्कृतियों के लोकतंत्र पर वैश्वीकरण के अर्थतंत्र ने गहरा प्रहार किया और वे संस्कृतियाँ अपने अस्तित्व को बचा पाने में असमर्थ रहीं। लेकिन भारत अपनी मजबूत अर्थव्यवस्था के साथ इन परिस्थितियों में भी दृढ़ता से खड़ा रहा। भारतीयों की अपने राष्ट्र के प्रति भावात्मक चेतना ने भारत की प्राचीन गौरवशाली परम्परा और प्रगति की धारा को समानान्तर आगे बढ़ाया और इक्कीसवीं सदी में भारत विश्व के समक्ष एक राष्ट्रवादी प्रतीक के रूप में दृढ़ता से स्थापित है।

– हरीश अरोड़ा
सम्पादक
drharisharora@gmail.com
08800660646

संक्रांति, बैसाखी
14 अप्रैल, 2018

मैं उस अखंडता का हिस्सा हूं, जिसे भारतीय राष्ट्रवाद कहा जाता है।
-मौलाना आजाद

International Journal of Innovative Social Science & Humanities Research
ISSN: 2349-1876 (Print) | ISSN : 2454-1826 (Online)

Volume –V, Issue – II, April- June (2018)

CONTENTS / अनुक्रम

सम्पादकीय *(भारतीय राष्ट्रवाद और संस्कृतिबोध)* ..... **iii**

1. भारतीय राष्ट्रवाद बनाम विश्व 1
अर्चना दुबे
2. भारतेन्दु के साहित्य में राष्ट्रवादी चिन्तन 6
दीपमाला
3. आइए बनाएं एकात्म मानवदर्शन पर आधारित मीडिया 9
संजय द्विवेदी
4. मौलाना आज़ाद की पत्रकारिता में राष्ट्रीय चेतना 12
देवेन्द्र नाथ तिवारी
5. स्वतंत्रता–पूर्व हिंदी साहित्यिक पत्रकारिता में राष्ट्रीय जीवन–चेतना 15
चन्द्रप्रकाश मिश्र
6. सोशल मीडिया और सांस्कृतिक राष्ट्रवाद 21
संगीता वर्मा
7. हिंदी सिनेमा में राष्ट्रवाद 25
दीपक शर्मा
8. मॉरिशस की हिन्दी पत्रकारिता में राष्ट्रवाद की अन्तर्ध्वनि 29
कृष्ण कुमार झा
9. Is Media changing the Paradigm of Nationalism? ---------- 33
Gagandeep Kaur
10. मीडिया और राष्ट्रवाद 37
मीना शर्मा
11. समाज मीडिया व साहित्य के समक्ष वर्तमान चुनौतियाँ 40
विपिन गुप्त
12. Advertisements in Tele-media -- As the facade of Indian Nationalistic Thought ---------- 45
Mercy Jill Jill
13. राष्ट्रवाद की अवधारणा और हिंदी पत्रकारिता 49
नीरव अडालजा
14. हिंदी सिनेमा और साहित्य में राष्ट्रवाद 52
डिम्पल गुप्ता
15. भारतीयता के पोषक पं. दीनदयाल उपाध्याय की पत्रकारिता 57
सारिका कालरा
16. Globalization, Social Media and Nationalism ---------- 60
Mansi Khanna / Manju Khanna
17. भीमराव अम्बेडकर की पत्रकारिता में राष्ट्रवाद 64
दीपा भण्डारी
18. Folk Culture and Traditional Media as pillars of Development Communication ---------- 67
Tanvi Dahiya
19. India's Economic Growth Triggered by Journalism enrouting Nationalism ---------- 70
Garima Bhardwaj

20. Relevance of Nationalism in Journalism ---------- 77
Jyoti Sharma
21. भारतेन्दुयुगीन पत्रकारिता में राष्ट्रवादी स्वर 80
कमलेश कुमारी
22. सुभद्राकुमारी चौहान के काव्य में राष्ट्रवाद 84
एस.टी. मेरवाडे
23. राष्ट्रवादी पत्रकारिता और पंडित दीनदयाल उपाध्याय 86
साहेबहुसैन जे. जहागीरदार
24. राष्ट्रवाद और भारतेन्दु हरिश्चन्द्र 88
सुनीता
25. भारतीय पत्रकारिता में राष्ट्रबोध की आवश्यकता क्यों? 91
सीमा सिंह
26. राष्ट्रवाद की अवधारणा और हिंदी पत्रकारिता : जेलों में लेखन 95
वर्तिका नन्दा
27. भारतेन्दुयुगीन पत्रकारिता में राष्ट्रवाद 97
पंकजेन्द्र किशोर
28. जयशंकर प्रसाद के नाटकों में राष्ट्रीय चेतना 101
सरिता देवी शुक्ला
29. उत्तर मध्यकालीन वीरकाव्य में राष्ट्रबोध 106
बबली गुर्जर
30. प्रसाद के नाटकों में अभिव्यक्त राष्ट्रवादी चेतना 110
ए.डी. चावड़ा
31. लोक कलाएं : देश की धड़कन 114
अनुपमा श्रीवास्तव
32. प्रसाद के नाटकों में अभिव्यक्त राष्ट्रवादी चेतना 119
भावना शुक्ल
33. विदेशों में हिंदी पत्र-पत्रिकाओं में राष्ट्रबोध 122
रुचिरा ढींगरा
34. सबसे पहले देश लिखेंगे 125
आलोक दीपक
35. हिंदी की आरंभिक पत्रकारिता का मूल चरित्र एवं राष्ट्रबोध 129
संध्या वात्स्यायन
36. सांस्कृतिक पत्रकारिता का चरित्र 132
गुंजन कुमार झा
37. भारतीय राष्ट्रवाद बनाम वैश्विक नेशनलिज़्म 135
दिलीप कुमार झा
38. Globalization and Cultural Identity with the specific study of the Nationalism ---------- 138
Ishrat Fatma / Shivani Vashist
39. The Spiritual basis of Indian Culture ---------- 143
Anjani Kumar Jha
40. मध्यकालीन हिंदी भक्ति साहित्य में राष्ट्रीय बोध 146
अनिल कुमार
41. राष्ट्रवाद की अवधारणा और हिंदी पत्रकारिता 154
सुषमा देवी / सुमन रानी
42. मीडिया का राष्ट्रवाद और हाशिए का समाज 157
मधु लोमेश
43. भूमंडलीकरण, सोशल मीडिया और राष्ट्रबोध 161
श्रवण कुमार

44. लोकसंस्कृति, लोकमूल्य और भारतीय पत्रकारिता 164
वंदना
45. भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन और राष्ट्रवादी पत्रकारिता 167
सविलता यादव
46. राष्ट्रवाद, भूमण्डलीकरण एवं सोशल मीडिया 170
मीरा शर्मा
47. वर्तमान परिप्रेक्ष्य में मीडिया की भूमिका और राष्ट्रवाद 173
प्रीतम सिंह शर्मा
48. भारतीय मीडिया और राष्ट्रबोध 176
ध्रुव कुमार
49. भूमंडलीकरण, पत्रकारिता और राष्ट्रवाद 179
सविता रानी
50. विभिन्न मनोवृत्तियों वाले भारत में राष्ट्रवाद और मीडिया 183
बलराम गुप्ता 'संकर्षण प्रजापति'
51. प्रसाद के नाटकों में अभिव्यक्त राष्ट्रवादी चेतना 188
दयाल प्यारी सिन्हा
52. स्वतंत्रतापूर्व की पत्रकारिता में राष्ट्रबोध 192
दर्शना धवल
53. Hindi Cinema as a source of Cultural Nationalism ---------- 195
Deepti Sharma
54. Role of Press in Nationalism ---------- 199
Rakhi Devi
55. मीडिया और राष्ट्रवाद : कुछ सपनें, कुछ हकीकत 202
सौम्यरंजन दाश
56. रामधारी सिंह दिनकर की राष्ट्रीय-सामाजिक चेतना 206
जयश्री शुक्ल
57. राष्ट्रवाद और भारतेंदुयुगीन पत्रकारिता 209
मणिकांत ठाकुर
58. भारतीय राष्ट्रवाद बनाम वैश्विक राष्ट्रवाद : उदय एवं परिणति 213
बीरेन्द्र सिंह
59. दिनकर के काव्य में राष्ट्रवादी चेतना 216
मो. माजिद मिया
60. राष्ट्र के उत्थान में भारतेंदुयुगीन पत्रकारिता का महत्त्व 219
गीता
61. भूमंडलीकरण, सोशल मीडिया और राष्ट्रवाद 223
प्रमोद कुमार यादव
62. आधुनिक कविता और राष्ट्रीयता 226
नीतू परिहार
63. सोशल मीडिया, युवा वर्ग और राष्ट्रवाद 229
दिनेश कुमार गुप्ता
64. भारतीय राष्ट्रवाद और डॉ. अम्बेडकर 232
गणेश ताराचंद खैरे
65. सामाजिक-राष्ट्रीय सरोकार के सर्वप्रथम प्रवर्त्तक : पत्रकार 'भारतेन्दु' 234
कामिनी देवी
66. भूमंडलीकरण, सोशल मीडिया और राष्ट्रवाद 239
जसराम
67. भूमंडलीकरण, राष्ट्रवाद बनाम वैश्विक चेतना 241
विपिन कुमार शर्मा

68. भूमंडलीकरण, सोशल मीडिया और राष्ट्रवाद 244
अभिषेक यादव
69. राष्ट्रीय चेतना के परिप्रेक्ष्य में पं. माखनलाल चतुर्वेदी का 'कर्मवीर' 247
अनीता पटेल
70. रामधारी सिंह 'दिनकर' के काव्य में राष्ट्रबोध 250
राधारानी वर्मा
71. भूमंडलीकरण, सोशल मीडिया और राष्ट्रवाद 253
अंजली कायस्था
72. राष्ट्रवाद की अवधारणा और हिन्दी पत्रकारिता 256
संगीता कुमारी
73. राष्ट्रवाद की अवधारणा और हिन्दी पत्रकारिता 259
चारू रानी
74. मध्यकालीन कवि कबीर के काव्य में राष्ट्रवादी भावना 262
ओमवीर सिंह
75. मैथिलीशरण गुप्त के काव्य 'भारत भारती' में राष्ट्रवाद 265
शक्ति मलिक
76. पंडित दीनदयाल उपाध्याय की पत्रकारिता और जीवन मूल्य 268
युवराज कुमार
77. स्वतंत्रता आन्दोलन में गाँधी की पत्रकारिता का सक्रिय योगदान 271
मीनाक्षी कुमार
78. स्वतंत्रता पूर्व की साहित्यिक पत्रकारिता में राष्ट्रीय जीवन चेतना 274
सिम्मी चौहान
79. सांस्कृतिक पत्रकारिता का मूल चरित्र 278
पिंकी पारीक
80. स्वतंत्रतापूर्व की साहित्यिक पत्रकारिता में राष्ट्रीय जीवन चेतना 280
महेश चन्द
81. माखनलाल चतुर्वेदी की पत्रकारिता में राष्ट्रीय चेतना 283
प्रीति सिंह
82. स्वतंत्रतापूर्व पत्रकारिता में राष्ट्रवाद के विविध स्वर 286
नवाब सिंह
83. राष्ट्रीय और हिन्दी पत्रकारिता 293
महादेवी गौरव / विद्यावती राजपूत
84. स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी पत्रकारिता में राष्ट्रीयता का स्वरूप 296
दुलुमनि तालुकदार
85. उन्नीसवीं सदी की साहित्यिक पत्रकारिता में राष्ट्रवादी चिन्तन 300
बबिता सिंह
86. Oral Tradition and Culture : A Study of Dogra Folk Songs ----------305
Kamaldeep Kaur
87. वैश्विक मूल्य और भारतीय राष्ट्रवाद 312
कपिलदेव प्रसाद निषाद
88. भारत में राष्ट्रवाद 315
एकता रानी
89. राष्ट्रवाद के निर्माण में साहित्य एवं मीडिया की महत्ता 317
रेणु गौतम
90. नए भारत में राष्ट्रवाद का स्वरूप और भारतीय पत्रकारिता 320
संगीता रॉय
91. मीडिया और सांस्कृतिक राष्ट्रवाद 323
सपना सावईकर

92. पत्रकारिता में राष्ट्रबोध की प्रासंगिकता 326
कान्ता देवी
93. भारतीय जीवन मूल्य और पं. दीनदयाल उपाध्याय की पत्रकारिता 328
शीला भास्कर
94. स्वतंत्रतापूर्व साहित्यिक पत्रकारिता में राष्ट्रीय जीवन चेतना 331
गीतांजली द. सुखसारे
95. हिंदी कविता में राष्ट्रवाद 337
साधना अग्रवाल
96. कबीर : सांस्कृतिक राष्ट्रवाद के प्रस्तोता 340
प्रदीप कुमार
97. मैथिलीशरण गुप्त और महाकवि नाथूरामशंकर शर्मा 'शंकर' के काव्य में राष्ट्रबोध 345
राजेश कुमार
98. Reinterpreting Historiography 'Notes' on Tipu Sultan and his Religious Nationalism ----- 348
Tripti Tyagi
99. हिंदी उपन्यासों में राष्ट्रवादी स्वर 351
सुरैया खान
100. सांस्कृतिक राष्ट्रवाद के सूत्र सुर संस्कृत पत्रकारिता 354
उत्तरा सिंह
101. प्रसाद के नाटकों में अभिव्यक्त राष्ट्रीय चेतना 358
मीनू पारीक
102. भारतेन्दुयुगीन पत्रकारिता और राष्ट्रीय चेतना 361
सतीश कुमार भारद्वाज
103. भारतेन्दु एवं प्रसादयुगीन नाटकों में राष्ट्रवादी तत्व 364
लक्ष्मी गुप्ता
104. कवि मुक्तिबोध की पत्रकारिता में निहित जनवादी राष्ट्रीय चेतना 368
सत्य प्रकाश तिवारी
105. भारतीय जीवन मूल्य और पं. दीनदयाल उपाध्याय की पत्रकारिता 371
विशाल कुमार यादव
106. भारतेन्दु की पत्रकारिता में राष्ट्रवादी चिन्तन 373
नीलम सिंह
107. भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन और राष्ट्रवादी पत्रकारिता 376
सरला कुमारी
108. महिला सशक्तिकरण में राष्ट्रवाद की लहर उठाती फिल्म पत्रकारिता 378
ऋतु शर्मा
109. राष्ट्रवाद की अवधारणा और तमिल पत्रकारिता 382
जी. शांति
110. आधुनिक राष्ट्र निर्माण में मीडिया की भूमिका 385
निर्मल सिंह
111. भारतेन्दु युगीन हिंदी पत्रकारिता एवं राष्ट्रवाद 388
सुमिता त्रिपाठी
112. स्वतंत्रता पूर्व की पत्रकारिता में राष्ट्रीय जीवन चेतना 391
पूनम सेठी
113. अस्तित्व की खोज पर आधारित भारतीय फिल्म क्वीन और अमेरिकी फिल्म वाइल्ड 396
स्वाति शर्मा
114. हिंदी पत्रकारिता और राष्ट्रवादी विचार 402
मोनिका
115. राष्ट्रवाद और हिंदी पत्रकारिता 405
सर्वदमन त्रिपाठी

116. भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन और राष्ट्रवादी पत्रकारिता 407
प्रेम प्रकाश शर्मा
117. आपातकाल : भारतीय लोकतंत्र का काला अध्याय 409
प्रीति कुमारी
118. वैश्विक मूल्य और भारतीय राष्ट्रवाद 413
श्री प्रकाश के. मिश्र
119. वर्तमान में राष्ट्रवाद के ज़मीनी धरातलों की पड़ताल 415
रवि कुमार
120. Modi, Television Media & Human Psychology ----- 418
Vikash Singh
121. भारत में राष्ट्रवाद की समस्याएं 427
नैन सिंह
122. राष्ट्रीय काव्यधारा में मैथिलीशरण गुप्त का स्थानं 429
सुनीता सिंह
123. राष्ट्रवाद की भावना और मैथिलीशरण गुप्त का 'भारत भारती' 432
मोहम्मद इसराइल
124. राष्ट्रवादी कला : जामिनी रॉय के संदर्भ में 437
प्रकाश दास खाण्डेय
125. गुरु गोबिंद सिंह के काव्य में राष्ट्रबोध की प्रतिध्वनि 440
भूपिंदर कौर
126. हिन्दी कविता की राष्ट्रवादी दृष्टि 445
महेन्द्र प्रताप सिंह
127. Press and Genesis of Nationalism ----- 449
Shruti Vip
128. लोक सांस्कृतिक मूल्य और पत्रकारिता 453
शिवमंगल कुमार
129. सांस्कृतिक राष्ट्रवाद और हिन्दी पत्रकारिता 457
ममता देवी
130. भारतीय राष्ट्रवाद बनाम विश्व 460
मंगल देव सिंह
131. गुरु गोबिंद सिंह के साहित्य में राष्ट्रवाद 464
शोभा कौर
132. भारतीय जीवन मूल्य और पं. दीनदयाल उपाध्याय की पत्रकारिता 467
सोनम शर्मा
133. भारतीय पत्रकारिता और राष्ट्रवाद चिन्तन 470
स्नेहलता
134. भूमण्डलीकरण, सोशल मीडिया और राष्ट्रवाद 474
ममता कुमारी
135. सांस्कृतिक राष्ट्रवाद के सूत्र और हिन्दी पत्रकारिता 478
के.वी. उमाशंकर (शव)
136. भारतीय पत्रकारिता का मूल चरित्र और राष्ट्र-बोध 480
आसिफ उमर
137. असहयोग आन्दोलन और हिन्दी की राष्ट्रवादी पत्रकारिता 482
रामपाल गंगवार
138. लोक और मीडिया 486
लोकेश कुमार गुप्ता
139. मैथिलीशरण गुप्त के काव्य में राष्ट्रबोध 489
सरिता सिन्हा

140. जयशंकर प्रसाद के नाटक स्कन्दगुप्त में राष्ट्रीय भावना 493
छाया रानी
141. स्वतंत्रता का दौर और हिन्दी पत्रकारिता 495
अनीता देवी
142. राष्ट्रवाद के निर्माण में मीडिया की भूमिका 500
मोनिका दुबे
143. पण्डित दीनदयाल उपाध्याय की राष्ट्रवाद की अवधारणा 502
अनीता कैमी
144. रामधारी सिंह दिनकर की राष्ट्रीय भावना 504
चंचल सिंह
145. हिंदी रंगमंच की दशा और दिशाएं : मीडिया की सक्रियता 506
मनीषा बत्रा
146. विभिन्न साहित्यकारों के साहित्य में राष्ट्रबोध 509
सरिता
147. स्वातंत्र्योत्तर साहिहित्यक पत्रकारिता में राष्ट्रीय चेतना का स्वरूप 513
कैलाशी मीना
148. भारतेन्दु हरिश्चन्द्र के साहित्य में राष्ट्रवाद 515
सपना
149. हिन्दी साहित्य में प्रगतिवाद के संदर्भ में राष्ट्रवाद 518
रेखा
150. उत्तर मध्यकालीन साहित्य में राष्ट्रवाद 522
सरिता
151. डॉ. अम्बेडकर की पत्रकारिता और राष्ट्रवाद 524
सुमन देवी
152. भारतीय पत्रकारिता का मूल चरित्र और राष्ट्रबोध 528
शिखा लखानी
153. भारतीय राष्ट्रवाद बनाम विश्व 531
तरुण कुमार
154. भूमण्डलीकरण के दौर में मीडिया और राष्ट्रवाद 534
सुशील कुमार
155. भारत में राष्ट्रवाद और अम्बेडकर 537
राम बिलाश यादव